# मनुष्य बनो

जौलाई १९८६

वा० मू १०-००

शरणागति

शुभ संकल्प,

क्षमा,



प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्मचर्य पालन,

क
याल फकीरचन्दजी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब)

# 'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम,सभ्यता,आदर, शिष्टाचार,सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल,सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जॉय।

—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जवाबी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य १०-०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहाँ से जो उत्तर मिले व अगला अंक निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

# मनुष्य बनो


| वर्ष ३५ | अगहन संवत २०४३ वि० | अङ्क १० |
|---|---|---|


## शब्द

साधु समझ करो कुछ करनी ॥ टेक ॥

नहाया धोया टीका लगाया, घंटा शंख बजाया ।
आरत साजी मन्दिर जाकर, क्या इससे फल पाया ॥ साधु०
आसन मारा धूनी रमाई, कफनी पहन के डोले ।
मांगी भीख मिला क्या तुमको, भाई तुम तो भूले ॥ "
गले में माला डाल के आये, भेस भयानक भाई ।
शान्ति चैन की गम नहीं पाई, भूल में उमर बिताई "
अंग भभूत कमर मृगछाला, जटाजूट सिर बांधे ॥
क्या समझा क्या हाथ लगा है, काल बोझ धरा कांधे "
कर सतसंग सार कुछ बूझो, सार में साँची भलाई ।
राधास्वामी दया करेंगे, लो उनकी शरनाई ॥ "

# (६) नाम का सुमिरन

सायंकाल और प्रातः काल संध्या में नाम सुमिरन करना अच्छा है परन्तु यह केवल साधारण मनुष्यों के लिये हैं। सुमिरन इस प्रकार हो कि सोते, जागते, उठते, बैठते, बराबर होता रहे यदि तू युवक है तो तुझको अवश्य अपनी स्त्री का किसी समय प्रेम और प्यार रहा होगा। क्या तू रात दिन में कभी उसको भूलता रहा है? कंगाल को दस बीस पैसे मिल जाते हैं, वह चलते फिरते उसकी सुध किया करता है। गाय दूर चरने जाती हैं परन्तु बछड़े को नहीं भूलतं। हिरन बाजे के शब्द का प्रेमी है। जहाँ निर्दयी बहेलिये ने बीन बजाया मस्त हिरन के शब्द के सुनते ही तड़पता हुआ बेसुध होकर उस बीन के पास पहुंच जाता है। बहेलिया उस को जान से मार देता है परन्तु वह शब्द के प्रेम और रस में अपना प्राण गँवाता है अपने को नहीं बचाता। दीपक जलता है। जहां प्रकाश फैला पतंगा तड़पता हुआ पहुंचा और जलकर उससे एक हो रहा। कीड़े को भृंगी लाकर अपने छत्ते में बन्द कर देती है। कीड़े को उसके नाम का सुमिरन रहता है। ध्यान द्वारा वह किसी दिन आप भृंगी हो जाता है मछली पानी का सुमिरन करती है। क्षण मात्र के लिये उसे पानी से अलग कर दो वह मर जायेगी। इसी प्रकार तू भी मालिक के नाम का प्रेमी हो जा फिर देखें तो सही कैसे तुझ को ईश्वर का दर्शन नहीं मिलता।

**परम संत कबीर साहिब** की वाणी है :—

## दोहा

१. सुमिरन की सुध यों करो, जैसे कामी काम।
एक पलक बिसरै नहीं, निश दिन आठों याम ॥ १ ॥

२. सुमिरन की सुध यों करो, जैसे दाम कँगाल ।
कहैं कबीर बिसरै नहीं, पल पल लेत सँभाल ।। २ ।।
३. सुमिरन की सुध यों करो, जैसे नाद कुरंग ।
कहैं कबीर बिसरै नहीं, प्राण तजै तेहि संग ।। ६ ।।
४. सुमिरन की सुध यों करो, जैसे दीप पतंग ।
प्राण तजै छिन एक में, जरत न मोडै अंग ।।४ ।।
५. सुमिरन सों मन लाइये, जैसे कीट भिरंग ।
कबीर बिसरै आपको, होय जाय तेहि रंग ।।५ ।।
६. सुमिरन सों मन लाइये, जैसे पानी मीनी ।
प्राण तजै पल बीछुड़े, सत कबीर कह दीन ।। ६ ।।

—०—

यह सुमिरन है । इसी प्रकार तू भी सुमिरन किया कर ।

—०—

## (७)सुमिरन की सहज युक्ति

**खट खट** माला फिर रही है । मुख से राम नाम का जाप हो रहा है । मन भीतर ही भीतर आकाश पाताल का चक्कर लगा रहा है । क्या यह सुमिरन है ? तू सहज में समझ सकता है कि सुमिरन नहीं है । यह केवल धोका और दिखावा है । तू मन में सुमिरन क्यों नहीं करता ? आँख कान मुंह बन्द कर ले । तेरे अन्दर में मालिक के नाम की धुन (ध्वनि) हो रही है । उसको सुरत के कान से सुन । इस सुमिरन से तेरा मन पवित्र और निर्मल होगा । तू प्रकाश स्वरूप मालिक का दर्शन कर सकेगा और अपने आप की समझ तुझे आजायेगी । यह सहज युक्ति है । यह अनहद मार्ग है । यह सुरत शब्द योग का अभ्यास है । बाहिर क्या दिखलाता है ? अपने अन्तर में क्यों नाम नहीं

जपता ? क्षण मात्र तू इस नाम को जप ले, यह वर्षों की पूजा पाठ से कहीं बढ़कर होगा, नहीं तो सारा जीवन नष्ट हो जायेगा और कुछ भी हाथ न आयेगा । तेरी आयु कितनी बीत गई ! सोच समझ ! देख ! बाहिर मुखी बातों से अब तक क्या मिलता है जो आगे मिलेगा ? तू अपने पिछले अनुभव ले लाभ उठा और तेरा भला होगा ।

—०—

## दोहा

१—सुमिरन सुरत लगाय कर, मुख से कछू न बोल ।
बाहिर का पट देयकर, अन्तर का पट खोल ॥ १ ॥

२—माला फेरत मन खुशी, ता ते कछू न होय ।
मन माला को फेरते, चट उजियारा होय ॥ २ ॥

३—माला फेरत युग भया, फिरा न मन का फेर ।
कर का मनका डाल दे' तू मन का मनिका फेर ॥३ ॥

४—कबीर माला काठ की, बहुत जतन का फेर ।

## धन्यवाद

२५) श्रीमती सरला एवं सुन्दर लाल केहरा न्यूदहली ५) श्री गनेश दत्त शर्मा, कागड़ा

२५) श्री राम चन्द्र जी ने (श्री पुत्तु लाल पूसे की बरसी पर)

१०) किसन लाल साहनी कानपुर, ५०) श्री बाबू लाल जी (कानपुर संगत की तरफ से)

१००) श्री देश राज जी हिसार ने पत्रिका की सहायतार्थ भेजे हैं हम सभी भाई बहनों के आभारी हैं जिन्होंने सहयोग देकर पत्रिका के संचालन में हाथ बढ़ाया है मालिक सबका भला करे ।

प्रकाशक

—०—

न जाना है क्या राम लक्ष्मण है।
न समझा भरत क्या है क्या शत्रु घन है॥
किया राम का हाय अपमान तुमने।
लिया हाय! भ्रम और अज्ञान तुमने॥
नहीं पाया प्रमाण अनुमान तुमने।
किया कब कभी इनका सन्मान तुमने॥
अपाहज हुये आलसी बन के सोये।
खुली आंख और जन्म को अपने रोये॥

हनूमान ने देखा कि समुद्र के मायावी कल में क्षोभ है अणिमावृत्ति का साधन किया। मच्छर के रूप को धारण किया और फन फनाते हुये उस कल के आकर्षण को अपने ऊपर नहीं आने दिया। उड़े और तट के समीप जा पहुंचे।

तट पर बहुत बड़ी कल हिलने डोलने और खाने वाली थी। इस में बहुत बड़ी शक्ति थी। हनूमान ने गणिमा और महिमा का रूप धारण कर लिया और अपनी युक्ति से तोड़ फोड़ कर उछले और किनारे लगे।

लँका में बड़ी चौकसी थी। पहरे वाले बड़े सचेत रहते थे। इनकी दृष्टि से बच कर निकलना फिर भी कठिन था। फिर अणिमा वृत्ति का साधन किया। राम ने उन्हें इस मुद्रा को सिखा रखा था। छोटे बने। सब की आंख बचा कर निकल भागे। इन्होने सब को देखा। इन्हें किसी ने भी नहीं देखा।

स्वप्न की लीला को अपने लो परख।

तुम कभी छोटे बड़े हो लो निरख॥
स्वप्न में जो चाहो बन जाओ अभी।
चलते फिरते ठहरो उड़ जाओ अभी॥
स्वप्न में यह देह सूक्ष्म जान लो।
देह यह मन है इसे पहिचान लो॥

मन में बैठो मन में पैठो मन को जान ।
मन ही में है सब तुम्हारे ज्ञान ध्यान ।।
खोल कर कहता हूँ कह देतां हूं बात ।
मन ही में है दाव पेच और मन में घात ।।
बैठो मन के घाट पर मन बस करो ।
मन को साधो और न अब टस मस करो ।।
मन तुम्हारे हाथ में आयेगा जब ।
सूझ युक्ति से सुझायेगा यह सब ।।

—०—

# दूसरा समुल्लास

## लंका का नगर

आगये ! समुद्र को पार कर लिया । यह हुआ । अब क्या करें । वहां कौन था, जो इन्हें पता बता देता । राज काज का सारा प्रबन्ध मायावी (साइंटिफिक) था । जगह जगह पृथ्वी को खोखली करके रावण के कर्मचारियों ने भीतर ही भीतर कोट बना रक्खे थे । ऐसे कोट समुद्र में भी थे । ऊपर ऊपर पानी और पानी के नीचे राक्षसों (अपनी ही रक्षा करने वाले निश्चरों) की पलटन की पलटन रहती हुई दुरबीन लिये देखा करती थीं कि कहीं कोई अन्य देशी शत्रु या गुप्त दूत तो नहीं आरहा है । जल थल दोनों जगहों में यह प्रबन्ध था ।

इधर देखा, उधर देखा, कोई बात समझ में नहीं आई । सामने एक पहाड़ी दिखाई दी । उनकी चोटी पर चढ़ गये । दृष्टि साधन की जोति मुद्रा में निपुण थे । उस पर आये, लंका दिखाई दी ।

यह लंका सोने की थी । सोने का नाम स्वर्ण है । यह दूर से जगमगा रही थी : ऊँचे ऊँचे खम्भों पर सोने के कलश

चढ़े हुए थे। लोगों के घर दस दस, पचास पचास, अस्सी अस्सी मंजिलों के बने हुए थे। इन सब को भीतों (दीवारों) पर सोने का रंग फिरा हुआ था। यह सूरज की धूप में चमक रहीं थीं। आंखें चकाचौंध होती थीं।

लम्बी चौड़ी सड़कें बनी हुई थीं। जगह जगह पर पानी की नदी चल रही थीं। बाटिकाओं (बागों) की गिनती कौन कर सकता है। इनके वृक्ष फल और पत्तों से लदे हुये लहलहा रहे थे। मगर साफ सुथरा! कूड़े करकट का कहीं नाम तक नहीं। एक तिनका भी कहीं नहीं दिखाई देता था। रथ, बहली और नाना प्रकार के बाहन दौड़ रहे थे। गलियों गलियों में ऊँचे ऊँचे शिवाले, देवाले, मठ, देवीआले उसकी शोभा को चार चाँद लगा रहे थे।

नगर क्या था/वह स्वर्ग भूमी बना था।
रतन पन्नों और होरों से वह जड़ा था॥
कहीं टूटा फूटा कोई घर न देखा॥
सुखी सब थे कोई भिखारी न भूका।
न निरधन न निर्बल न रोगी था कोई।
न बेकाम था और न सोगी था कोई॥
चकित देख कर हो गये, उसको हनुमत।
यह सोचा चलो देखो बस्तो की सदगत॥

लँका एक पहाड़ी पर बसी हुई थी, जिसका नाम त्रिकूट था और कोई कोई प्राणी उसे त्रिकुटी नगर कहते थे। इस पहाड़ी पर तीन चोटियां, वैष्णवों के तिलक के आकार की थीं। उन पर रावण ने अपूर्व बुद्धिमता से इसे बसाया था। बुद्धि काम नहीं करती थी।

गढ़ त्रकूट पर लँका बसे। निडर निशंक रावण तहां रहे ॥
अद्भुत छवि को वरणे पारा। चित्रकार ने नगर सवाँरा ॥
चित्र, विचित्र नगर की शोभा। देख पवन सुत का मन क्षोभा।
स्वप्न समान सूक्ष्म यह देशा। निश्चर बसें धार बहु भेषा।
सुन्दर नर नारी जहाँ डोलें। हँस मुख मीठा बाणी बोलें ॥

यह पहाड़ी से उतरे। छोटा भेश धारण किया। नगर के फाटक पर पहुँचे। उस पर लंकनी नामक एक राक्षसी का पहरा था। रावण की राजनीति के अनुसार स्त्री और पुरुष सब से काम लिया जाता था। सब रात दिन काम करते रहते थे। वह किसी एक को भी बिना काम और उद्यम नहीं रहने देता था। यही कारण था कि उसकी प्रजा सब की सब बली और पराक्रमी थी।

लंकनी हनूमान पर झपटी—"चोर! तू यहां कैसे आया। नहीं जानता! मैं नगर की रख वाली कर रही हूं। सब की आंखों में धूल डाल आया। मेरे हाथ से बच कर न जाने पावेगा। मैं तुझे खा जाऊँगी। लंका का चोर मेरा अहार है।" हनूमान को उस समय और कुछ न सूझा। घूसा तान कर उसकी पीठ पर मारा। वह विकल हो गई। कहने लगी—"मैं समझ गई, देवताओं ने मुझे कह रक्खा था कि जब किसी बानर का घूँसा खाकर तू विकल हो जायगी तो समझ लेना कि लंका के विनाश का समय आगया। दैव इच्छा प्रबल है। जा, तू अपना काम कर। मैं तुझे नहीं रोक सकती तुझे देख लिया। तू राम का दूत है। तेरे दर्शन मात्र से मेरा उद्धार हो गया। जन्म लेने का फल मुझे मिल गया।"

तेरी सँगत एक क्षण की जप से तप से बढ़ के हैं।
जा कहीं, तुझको न डर है और किसी का है न भय ॥

स्वर्ग में अपवर्ग में वह सुख कभी मिलता नहीं।
जो है सुख सतसंग में उसकी है क्या उपमा कहीं ॥

"ऐ हनूमान ! तेरे लिये मित्र, शत्रु सब समान हैं। विष भी खायेगा तो वह तेरे लिये अमृत हो जायगा। जिस पर तू दृष्टि डालेगा, वह तेरे, वशीभूत हो जायगा। यह सब महिमा राम की है जिन्होंने ब्रह्म का अवतार धारण किया है। जिस पर उनकी कृपा है, उसको कौन हानि पहुँचा सकता है।"

अणिमा मुद्रा ने फिर काम दिया। छोटा रूप बना कर यह नगर में आये, घर घर में गये। दिन का समय था लेकिन सब अभी तक सोये पड़े थे। सभ्य देशी अब भी बहुधा दिन को सोते और रात को काम करते हैं। यही कारण है कि वह निश्चर (रात की चर्या करने वाले) कहलाते हैं। उन में दिनचर (दिन की चर्य्या करने वाले) कम होते हैं। यह उसी भेष में रावण के महल में गये। वह माँस मदिरा पान करके पांव पसार कर सो रहा था। और भी सब नींद में थे। रखवाली करने वालों ने इनको नहीं देखा और देखा भी होगा तो किसी ने ध्यान तक नहीं दिया।

लघु बनने में सुगमता, लघिमा अणिमा एक।
महिमा गरिमा कठिन गति, सूझे नहीं विवेक ॥
दीन दुखी लौ लीन पर, प्रभु की दया अपार।
गर्भभान को दुख महा, प्रभु है गर्भ अहार ॥
लेने को सत नाम है, देने कौ अनदान।
तरने को है दीनता, बूढ़न को अभिमान ॥

किस से पूछे गछें ! कोई नहीं मिला। राम की दया ने इनको खींच कर एक महल के समीप पहुंचा दिया। पाँव आप ही आप उधर पड़ने लगे। यह नई बात नहीं है। ऐसा होता

है और मनुष्य अनजान बना हुआ अपने मन्तव्य की ओर आप खिचा हुआ चला जाता है। तुम कुछ न करो। चित्त की वृत्तियों का रोक थाम में लगो। आप ही सब कुछ होने लगेगा और तुम को आश्चर्य न होगा।

—०—

# तीसरा समुल्लास

## हनुमान और विभीषण

यह घर जिसकी ओर उनका पाँव आप ही आप पड़ रहा थ, विभीषण का महल था। यह देखते भालते हुये उस में पहुंचे। और तो सब अभी नींद में थे, विभीषण जाग रहा था। इन्हें देखकर आश्चर्य हुआ। अपने आपको उस पर प्रगट किया और अभय होकर उसके पास गये।

हनुमान—"भाई ! निश्चरों के बीच में तुम दिनचर कैसे हो ?"

विभीषण—"तुम कौन हो, कहाँ से आये हो ? अन्य देशी हो, यहाँ के रहने वाले नहीं हो !"

हनुमान—"प्रश्न पर प्रश्न !" मेरे प्रश्न का उत्तर तो दिया नहीं आप ही प्रश्न कर बैठे। सुनो, राम ने ब्रह्म का अवतार धारण किया है। मैं उनका दूत हूँ। दिनचरों की भलाई और निश्चरों की बुराई के निमित्त आया हूं। तुम निश्चरों में दिन-चर प्रतीत हुये।इसलिये तुम्हारे पास आगया, नहीं तो और जगह चला जाता।"

रवि कुल रवि का बंस है, दिनकर उनको जान।
निशिकुल निशि का अंश है, निश्चर की पहिचान ।।
तत सवितुर्वरेणयम् यह गायत्री मंत्र।
जो रहस्य को प्राप्त हो, उसे दिखाऊँ तंत्र ।।

ओ३म् कहा भू भुवः तजा, तज दिया स्वः का ध्यान।
वह सवितर का भक्त है, उसका है कल्याण ॥
रघु रवि-कुल के वंश में, राम लिया अवतार।
जा कोई दिनचर बने, गायत्री अधिकार ॥
कर 'भर्गो देवस्य धी मही, धारे रवि का ध्यान।
राम भक्त इसको समझ, वह पावे निर्वाण ॥
धियो योन प्रचोदयात, गायत्री का सार।
दिनचर निः संदेश तू, महिमा अगम अपार ॥

(नोट) गायत्री मंत्र सम्पूर्णः ओ३म् भूर्भुवः स्वः, तत सवितुर्वरेणियम् भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात"

बिभीषण उठा, हनुमान से मिला। इन्होंने छाती से लगा लिया। विभीषण बोला—'मैं विभीषण रावण का छोटा भाई हूं। डरा, सहमा रहता हूं। इस डर के कारण मेरा नाम ही विभीषण हो गया। ('वि'–बड़ा ,भी' डर-भय) जैसे बत्तीस दांतों के बीच में जिभ्या (जबान) रहती है वैसे ही मैं यहाँ लंका में रहता हूँ। राम ने बड़ी दया की कि तुमको यहां भेजा। बिना हरी की कृपा के संतों का दर्शन नहीं होता। तुम ने सच कहा-निश्चरों में दिनचर कम होते हैं। मैं आज कृतार्थ हो गया। तुम्हारे दर्शन-मात्र के संग से मुझे विवेक आगया। सतसंग की महिमा गुप्त नहीं है लेकिन राम की कृपा के बिना उसकी उपलब्धि भी महा कठिन है। तुम्हारा नाम क्या है ?" हनुमान– मुझे सब हनुमान कहते हैं। मैं जाति का बानर हूं - सवेरे कोई मेरा मुंह देख ले या मेरा नाम ले ले तो दिन भर उसे आहार नहीं मिलता। राम ने दया की मुझे अपना सबसे छोटा सेवक बनाया। वह कृपालु दयाल हैं, सर्व समर्थ हैं, जो चाहें कर सकते हैं।"

जो चाहें तो पर्वत को राई करें।
जो राई हो पर्वत बनाकर रहें॥
उन्हीं की है लीला उन्हीं की दया।
उन्हीं की कृपा से यह सब कुछ हुआ॥
हनूमान को अपना सेवक किया।
उसे बुद्धि बल और साहस दिया॥
यहां आय। लंका में होकर निडर।
मिला तुमको दिनचर समझ बूझ कर॥
जो दिनचर हो सवितर का ध्यान दो।
इसी में भलाई हो अब कल्यान हो।

विभीषण—'तुमको मैं अपने घर में ठहरा तो सकता हूं लेकिन रावण के गुप्त दूत घर घर २ में रहते हैं। मैं डरा हुआ हूं, रोकने और ठहरने का साहस नहीं कर सकता। खाओ, पाओ, थोड़ी देर बैठकर वहाँ से रास्ता लो। और जो सेवा कहो और मुझ से बने तो मैं त्रुटि न करूँगा।,'

हनूमान—मैं तुम्हारी दशा को समझता हूँ। यहां रह नहीं सकता। न खाना पीना चाहता हूं। हाँ, तुम मेरी कुछ सहायता कर सकते हो तो वह केवल इतनी ही है कि मुझे बतादो कि रावण ने सीता को लेजा कर कहां रक्खा है। मैं उससे मिलना चाहता हूं।"

नहीं जीव जन्तु वहां जायेंगे।
जो जायेंगे तत्तक्षण वह फल पायेंगे॥
बड़ी चौकसी है, बड़ा है प्रबन्ध।
किसी की नहीं उस जगह होती सन्धि॥

"हाँ! इतना पता देता हूं कि सीता अशोक वाटिका में रहती है। जैसे तुम यहाँ तक आगये, अपनी ही युक्ति शक्ति और बल बुद्धि से वहां जा सकते हो। अशोक वाटिका नगर के

दक्षिण में है। वह बहुत दूर नहीं है। मैं तुमको पग-पग का पता दिये देता हूं। छुप छुपा कर वहां जाओ, उससे मिलो और अपना काम करो।"

विभीषण ने सारा चिट्ठा खोल कर सुना दिया। घर के भेदी से क्या बात छुपी रहती है। कहावत है "घर का भेदी लंका ढावे" और विभीषण पहला निशाचरो दिनचर था जिसने हनूमान को लंका का कच्चा चिट्ठा सुनाया। गुप्त भाँड़े को फोड़ फोड़ कर दिखा दिया और हनूमान उससे विदा होकर अशोक वाटिका की ओर चले।

—०—

# चौथा समुल्लास

## हनूमान और अशोक वाटिका

अन्य देशों में उसी देश का भेष धारण करलो तब तो कुशल है, नहीं तो पूछा पेखी होने लगती है, आपत्ति सिर पर आजाती है और काम में बाधा होती है। हनूमान ने फिर छोटा भेष बनाया। उछलते फाँदते हुये वहां पहुंचे जहां अशोक वाटिका थी। अशोक के सिवा वहाँ और कोई वृक्ष भी नहीं था उसमें पत्ते ही पत्ते रहते हैं न फल न फूल। हां! छाया निस्सन्देह घनी रहती है और ठंडक का लाभ होता है।

यह उछल कर उस पेड़ पर चढ़ गये, जिसके नीचे सीता बैठी हुई थी। साधारण वृति! क्रोध न मोह! तपस्या की मूर्ति हृदय में नाम का ध्यान!

वही उसका साथी यही संग था,
वही रूप मन में वही रंग था।

हनूमान ने मन ही मन में नमस्कार किया और चुप चाप पत्तों की ओट में बैठकर सोचने लगे। देखें सीता के साथ

यहाँ क्या वर्ताव होता है। इतने में वहां रावण आया, सीता ने उसी समय अपना मुंह उसकी ओर से फेर लिया।

रावण ने कहा—'अब तक तुझे मेरे बल और पराक्रम का ध्यान आया या नहीं ? या वही दशा है ?"

सीता बोली—"चल परे हट ! तेरे बल और पराक्रम का तो उसी समय पता लग गया था जब अकेले बन से तू मुझे हर लाया था। गीदड़ के समान गया, चोरी की और सिंह की स्त्री को उठा लाया। बल होता तो राम के साथ युद्ध करता। पापी ! तुझ में न लाज है न मर्यादा का ध्यान है और मुझ अपने बल और पराक्रम का भय दिखलाता है।'

रावण—"तू मेरा कहना मान जा ! मैं तुझे लंका की रानी बनाऊँगा।"

सीता—" कुछ दिनों में यह तेरी सोने की लँका मिट्टी में मिल जायेगी और जब राम लक्ष्मण के सनसनाते हुये बाण चलेंगे, तुझे कोई शरण तक न देगा, छुपता फिरेगा और वह बाण तेरे कलेजे को चीरते हुये तेरा लहू पीयेंगे और तू कुत्ते की मृत्यु मरेगा।"

रावण हँसा—तपस्वी और रावण का सामना करे ! न आंखों देखा, न कानों सुना "

सीता—देखा न हो, कानों से तो सुन रक्खा है। तेरी नकटी और कनकटी बहन सूर्पणखा खरदूषण और त्रिशरा तेरे भाइयों को बुला लाई और वह एक-एक करके मर मिटे। अब तेरी बारी है और तू बच नहीं सकता। मेरा समाचार मिला नहीं कि राम यहाँ आ पहुँचेंगे और तुझे इस पाप कर्म का दण्ड दिये बिना न रहेंगे।"

रावण—"एक तो दुबले पतले मनुष्य ! दूसरे तेरे वियोग

में दुखी। तीसरे मेरे भुज बल का भय ! चौथे न उसका कोई साथी न सहाई ! मुझे देख ! मेरी लंका को देख ! मेरी सामग्री और सेना को देख ! वह दो लड़के मेरे साथ क्या लड़ सकते हैं।"

सीता—"मैं ऐसे घोर पापी का मुंह देखना नहीं चाहती। तुझमें इमनी सामर्थ्य थी तो गीदड़ क्यों बना ? सामना करता एक अबला स्त्री के सामने अपने बल पौरूष को प्रशंसा करता है। तुझे लाज नहीं आती ! शूरवीर और योद्धा बना हुआ है।"

रावण—

बात को मान जा बातें न बना बात को सुन।
तुझको क्या होगया जो राम लक्ष्मण की धुन ॥

सीता—

हैं रत्न राम और वह रत्नों में बहु मूल रतन।
उन के जैसा कहाँ, जग में है कहाँ नर भूषन ॥
लक्ष्मण राम के भाई हैं, सहाई सेवक।
चल परे हट नहीं भाती तेरी मुझको बक बक ॥

रावण—"एक बार मुझको देख, मैं इसी को तेरी कृपा समझूँगा।"

सीता—"जिसने सूरज का दर्शन कर लिया है, वह जुगनू को क्या देखे। जिसकी दृष्टि में हाथी आगया है, वह ताल की मेंढकी पर क्या आँख डाले। सिंह का साथी गीदड़ को देखकर अपमान क्यों करे।"

रावण—"सीता ! तूने तपस्वियों के ध्यान में मेरा सन्मान नहीं किया। मैं देखूँगा कब तक तू हट पर तुली हुई है। एक महिना तक मैं चुप रहूंगा। यदि इसके अंदर तूने मेरी बात नहीं मानी, तो अपनी तलवार से तेरा सा काट डालूँगा।"

सीता—"बस, इसी को तूने अपनी वीरता की सीमा समझ रक्खी है ! तू ने मुझे क्या समझ रक्खा है ! मेरा प्राण तो अब भी वहां ही है, जहाँ राम के चरण कमल हैं। यहाँ यह अधम शरीर पड़ा है। यह आप मरा हुआ है। तलवार उठा और अपना काम कर। मैं कब इस अपवित्र भूमि में रहना चाहतीं हूँ।"

रावण ने फिर बहुत कुछ समझाया। उसे रानी बनाने की लालच दी। वह उसकी फुसलाहट और गीदड़ भभकी के भरें अर्रे में कब आने लगी थी। अन्त में सीता ने कहा—

राम तन में मेरे बसते हैं, बसे हैं मन में,
चाहे मैं घर में रहूँ चाहे रहूँ मैं बन में।
दूर हो दूर आँखों से परे जा मेरे,
पापी अभी एक ही पल क्षण में हट परे॥

वह खिसियाना और लज्जित होकर वहाँ से चला गया।

त्रिजटा—(तीन जटाओं वाली) एक राक्षसी सीता की सेवा में रहती थी। उसे इसके साथ प्रेम था। सीता को देख कर वह पास आ बैठी। कहने लगी "देवी ! धैर्य्य धरो ! इस पापी रावण के सिर पर पाप गूंज रहा है। मृत्यु मँडला रही है। राम अवश्य आते ही होंगे और आकर बदला लेंगे।"

सीता बोली—"न जाने वह दिन कब आयेगा !"

त्रिजटा—"मैंने कल रात स्वप्न देखा। एक बन्दर लंका में आया। उसने नगर को जला कर भस्म कर दिया। वह जाकर राम को लाया। राम ने रावण को मारा और तुझे अपने देश को ले गये।"

सीता—'अब यह वियोग का दुख नहीं सहा जाता। तू मेरे साथ हित रखती है, तो चिता बना कर मुझे उस पर बिठा

दे और आग लगा दे। मैं जल कर राख हो जाऊँ। अब जीना नहीं चाहती।"

त्रिजटा—"यह मुझ से नहीं होगा। मैं तुझे उस समय तक अपनी आंख की पुतली बना रक्खूंगी जब तक राम आयेंगे।"

सीता—"अच्छा! अब चलीजा। मुझे एकान्त मिले।" वह चली गई। सीता अकेली रह गई।"

सीता ने आकाश की ओर आँख उठाकर कहा 'चाँद! तू आग का अंगारा बन कर नीचे उतर आ और मुझे जलादे।" चांद कब अंगारा होकर नीचे उतरने लगा था! सीता ने तारों से कहा—"तुम हवन-कुण्ड की दहकती हुई वेदी के समान जगमगा रहे हो। ऊपर से मुझ पर आग वर्षा दो। मैं जल भुन कर भस्म हो जाऊँ।" तारे कब उसकी सुनने वाले थे। वह बहुत व्याकुल होगई। जिस वृक्ष के नीचे बैठी हुई थी, इससे बोली—"अशोक! वृक्ष की डालियों की रगड़ से आग उत्पन्न हो जाती है। इस समय ऐसा ही हो। तेरे पत्तों से आग की चिनगारियां झड़ कर मुझे जला दे और मैं अशोक हो जाऊँ"

यह शब्द सीता के मुंह से निकले ही थे कि पत्तों में छुपे बैठे हुये हनूमान ने राम की चमकती हुई अँगूठी नीचे गिरादी। वह जगमगाती हुई सीता के समीप आकर गिरी। इसने उसे आग की चिनगारी समझी। झपट कर उठाई। वह राम की अँगूठी निकली और उस पर राम का नाम खुदा हुआ था।

"हाय! यह कहाँ से आगई! क्या किसी राक्षस ने राम को मार कर इसे छीन लिया और मुझे दुखी करने के लिये इसे यहां फेंक दिया।"

"नहीं, नहीं ऐसा हो नहीं सकता। राम अजर अमर अविनाशी हैं उन्हें कोई नहीं मार सकता।"

'फिर यह अँगूठी क्यों और कैसे यहां आई ! क्या इसमें कोई राक्षसी लीला गुप्त है ? यह रहस्य मेरी समझ से बाहर है।' ऐ राम के प्यारे हाथ की अंगूठी ! तू मुझे बहुत प्यारी है क्या तू उड़ कर मुझे राम के आने का सदेशा सुनाने आई है ? राम कहां हैं ? कैसे हैं ? क्या कर रहे हैं ? अपनी सीता की सुध कैसे भूल गये हैं ?'

यों विचार करती सीता रो पड़ी।

बतादो राम आकर इस घड़ी, किस जगह और कहाँ तुम हो।
मुझे पास अपने लेजाओ, वहाँ बसते जहां तुम हो॥
दुखी हूँ जी विकल है, चित्त मेरा घेरा है चिन्ता ने।
सुध आके लेते ले चलो, मुझको जहां तुम हो॥
कहा करते हैं व्यापक राम हैं, संसार में निश दिन।
कहूं मैं कैसे बिन देखे, यहां तुम हो बहां तुम हो॥

रोती थी और गाती थी। वह बावली बन गई थी। हनुमान उसके दुख को न सह सके। वृक्ष की शाखा पर बैठे हुये राम रटन की धुन गा उठे।

राम चैतन्य मूर्ति हैं सब के नायक राम हैं।
जग के माता पिता हैं जग के सहायक राम हैं॥१॥
राम में विश्राम पद है राम ही में शान्ति।
राम में है ज्ञान मुक्ति' राम में निर्भ्रान्ति॥२॥
राम व्यापक जगत में हैं बोलो मुख से राम राम।
राम को भूलो नहीं, है राम ही में सुख का धाम॥३॥
राम का लो आसरा और राम का हो मन में ध्यान।
राम है सूत्रात्मा और राम ही है सब के प्राण॥४॥
राम कहले राम भजले, राम को जप राम राम।
राम हैं भक्ति भजन जप, जोग मुक्ति सुख के धाम॥५॥

कहाँ से यह शब्द आ रहा है ?' इधर देखा उधर देखा कोई दिखाई नहीं दिया।

तब सीता ने कहा—'ऐ इस प्यारे राम नाम के सुनने वाले ! तू आकाश से यह चित लुभाने वाली आकाश वाणी सुना रहा है। प्रगट क्यों नहीं होता ? मैं राम के सुपुत्र भक्त का दर्शन करूँ। मेरे कलेजा को ठंडक हो, छाती शीतल हो और मेरी जलती और तपती हुई आँखों को तरी पहुंचे।'

हनूमान उसी समय छोटे बंदर के रूप में वृक्ष से नीचे कूद पड़े।

—०—

# पाँचवाँ समुल्लास

## हनूमान और सीता

छोटा बन्दर, काला मुंह ! चमकती हुई पलक ! भांजती हुई पलकें ! टेढ़ी दुम ! सीता डरी, सहती और मुंह फेर लिया—'अरे यह कौन है ? कहां से आगया ? यह कैसे आकाश से गिरा ? किसने इसे मेरे पास भेजा ?'

हनूमान ने कहा—माई ! मैं बानर हूँ। राम का दूत हूं। बन से आया हूँ। राम ने तेरे पास भेजा है। जान पहिचान कराने के निमित्त अंगूठी दो कि तुझे मेरा विश्वास हो'

सीता ने इनकी तरफ मुंह दिया। ध्यान से बन्दर का रूप देखा। या तो वह वियोग में तड़फ रही थी या इन्हें देखकर मुस्कराई। नर और वानर की मित्रता कैसे हुई ?'

हनूमान-'वानर भी नर के आकार के हैं। वानर कहते हैं उसे जो नर के समान हो। सारे पशु पक्षियों की उपेक्षा वानर नरों से मिलते जुलते हैं।'

सीता—'वानर के पूंछ होती है, नर के कहाँ होती है ?'
हनूमान—'पहिले होती थी, अब नहीं होती है। यह पूंछ ही तो बावन भगवान का तीसरा पांव है जो उनकी पीठ की रीढ़ या मेरु नण्ड की हड्डी के नीचे मूलाधार से निकला हुआ था। इसी से उन्होंने बलि की प्रार्थना पर अन्तरिक्ष की माप की थी।'
सीता—'फिर यह पूंछ कहाँ चली गई ?'

हनूमान—'कटते कटते कट गई। मनुष्य इससे घृणा करने लगा। वह दूर होती गई। उसका आकार अब भी मेरु दण्ड के सिर पर दिखाई देता है। मनुष्य की इच्छा में बड़ी प्रबलता है। जो चाहता है वही हो सकता है। मनुष्य दाढ़ी बनाने लगा है। कुछ दिनों पीछे यह भी इसके मुंह पर न रहेगी।'
सीता—'बन्दर ! तू तो बड़ा पंडित और ज्ञानी है।'
हनूमान—'राम की कृपा से सब कुछ होता है। यह आश्चर्य जनक बात नहीं है।'

राम चाहें तिनके को ब्रह्मा करें।
राम चाहें प्रजा को राजा करें ॥
राम में सिद्ध है निद्धि शक्ति है।
राम ही से योग साधक मुक्ति है ॥
राम दाता है, विधाता जानकी
राम सबके पिता माता जानकी ॥
राम की बातें निराली हैं सभी।
मैंने उनको देखी भाली हैं सभी ॥
मैं न ज्ञानी हूं न मैं अवधूत हूं।
राम का सेवक हूं और निज दूत हूँ ॥

सीता—'यह सब सच है। मित्रता कैसे हुई ?'
हनूमान ने सारा वृतान्त सुनाया—सुग्रीव से मिल कर

एक बाण से राम ने वाली को मारा। उसके लाखों सेवक बन और पर्वतों में तेरी खोज कर रहे हैं। मैं इधर आया, तेरा दर्शन पाया। अब राम को जाकर तेरा समाचार सुनाऊँगा।"

सीता का हृदय भर आया। आंखों से आँसू निकल पड़े—

राम ने मुझको विसारा हाय हाय।
मैंने उनका क्या बिगाड़ा हाय हाय॥
उनका था मुझको सहारा हाय हाय।
मुझको दुख आपति ने मारा हाय हाय॥
रात दिन करती हूँ मन से हाय राम।
कष्ट दुख सहती हूं मन से हाय राम॥

हनूमान—'माई। राम को तुम्हारे विरह का वियोग तुम से कहीं दूना है। वह तो बाबले से बन गये हैं। दोनों भाई जीते जागते कुशल पूर्वक हैं। तुम चिन्ता न करो। मेरे लौटने की देर है। जहां मैं गया, राम बन्दरों की सेना लेकर लंका पर चढ़ आयेंगे और रावण को मार कर तुझे ले जायेंगे और जगत में उनकी यश और कीर्ति का गीत गाया जावेगा।"

सीता को ढारस बंधी। फिर भी कह उठी—"बन्दरों की सेना में तुम्हारे हो जैसे हैं कि कोई बली भी हैं।"

हनूमान ने अपने मन को एकाग्रः कर के महिमा और गिरमा मुद्रा का भाव भर लिया और देखते देखते पर्वताकार हो गये। "क्या कहूँ। राम की आज्ञा नहीं है, नहीं तो मैं अकेला रावण को मारकर तुझे समुद्र के पार लेजाता। कुछ दिनों के लिये धीरज धरो। अब राम के आने में देर न लगेगी।" यह कह कर हनूमान फिर छोटे बन्दर बन गये।

सीता प्रसन्न होगई। "राम तुम पर दया करें, अपनी अटल भक्ति दें! तुम अजर अमर अविनाशी बनो।"

हनूमान बोले—"आज मेरा जन्म सुफल होगया, अँजनी (आकाश जिसने पुत्र नहीं जना, क्वारी) का कोख आज पवित्र हो गया। माई! कई दिन हो गये मैंने कुछ खाया पिया नहीं, भूका प्यासा हूं।'

सीता—'मेरे पास क्या है, जो तुम्हें दूँ। इस अशोक बाटिका में फल फूल तक नहीं हैं वह कारागार है। रावण ने ऐसा प्रबंध कर रक्खा है इसमें फलने वाले वृक्ष न लगाये जायें और बंधियों (कैदियों) को फल फूल खाने का अवसर न मिलै। हां, इसके आस पास उसकी अनेक वाटिकायें हैं। हो सके तो इन में जाकर अपना पेट भरो।"

हनूमान—"इनका मुझे किंचित भय नहीं है, तेरी आज्ञा चाहता हूँ।'

सीता—"जाओ, राम का बल हृदय में रख कर अपना काम करो।'

हनूमान ने नमस्कार किया और कूदते फांदते वहां से चल खड़े हुये।

—०—

# छटा समुल्लास

## राज वाटिका में उत्पात

हनूमान रावण की राज वाटिका में आये। कुछ फल खाये कुछ तोड़ गिराये। कच्चे पक्के फलों का कई जगहों में ढेर लग गया। पेड़ भी उखेड़ कर बखेर दिये। डालियों और टहनियाँ, पत्तों और फूल तोड़ तोड़ कर इनके टीले बना दिये।

रखवाली करने वाले माली दौड़े। धनुष बाण, गुलेल, ढेल बांस से काम लेने लगे। यह कब इनको मानते थे। न किसी का बाण लगा न ढेला लगा। यह शाखों पर शाखा तोड़ तोड़ कर इनको मारते और इन पर डालियां फेंकते। एक अकेला बन्दर और इतने रखवाले! कोई सुनेगा तो क्या कहेगा! यह लज्जित हो हो कर उन्हें मारने लगे। यह भी उन पर डालियाँ तोड़ तोड़ कर फेंकते गये। कितने ही माली कुचल कर मरे, कितने ही घायल होकर भागे। रावण के पास आये—'महाराज! एक विचित्र बन्दर अशोक वाटिका के पास वाले राज बाग में आया है। उसने उसका नाश कर दिया। पेड़ उखाड़ डाले। डालियां तोड़ डालीं। मालियों ने गुलेल आदि से काम लिया। किसी को कुछ नहीं चली। बहुत माला पेड़ों से दब कर और कुचल कर मर गये।'

रावण ने अपने बेटे अक्षय कुमार (अक्षय जिसे कोई न जीत सके) को भेजा 'देखो तो सही! यह कैसा बन्दर है जिसने मालियों का नाक में दम कर दिया। देशी है या अन्य देशी है।'

राज कुमार आया—'धनुष बाण को सँभाला भी नहीं था कि अंजनी का पुत्र गरजा। तड़प कर इसके सिर पर आ गया। नोंचा, खसोटा, काटा, घायल किया और लातों से मार मारकर उसका कचूमर निकाल दिया और उस अक्षय कुमार को क्षय (मृत्यु) आ गयी। उसके कई साथियों को भी हनुमान ने मल दल कर रोंद डाला और वह मिट्टी में मिल गये।

रावण को समाचार भेजा गया। वह सुन कर अपने सुयोग्य और सब से बलवान पुत्र मेघनाद (बादल के समान गर्जने वाले) को इस के दण्ड देने के निमित्त भेजा। यह लंका में सबसे बड़ा तान्त्रिक (मन्त्र जानने वाले) मंत्रिक मन्त्र

साधन करने वाला) और मायावी साइँस जानने वाला) था।

इसे देख कर हनूमान फिर गरजे। एक पूरा वृक्ष उखाड़ कर उस पर आक्रमण किया। कई राक्षस उससे दब कर मरे। मेघनाद सँभला रहा। हनूमान उस पर झपटे। नख दांत और हाथ पांव से उसे बेवस कर दिया और ऐसा घूंसा लगाया कि वह पृथ्वी पर गिरा, मूर्छा आगई। यह दँनदनाते और कूदते फांदते हुये फिर वृक्ष पर चढ़ गये।

मेघनाद सचेत हुआ। उसने बहुत कर, बल, छल से काम लिया। हनूमान अँजनी (आकाश) पुत्र थे। मारुति कहलाते थे। आकाश तत्व क्या होता है, इसकी समझ अब तक किसी को नहीं आई। यह सारे बलों और शक्तियों का भँडार है। यह उससे बचते ही रहे। अंत में उसने ब्रह्मबाण हाथ में लिया और ओ३म् भूर्भुवः स्वः के गायत्री मन्त्र को पढ़ कर उस पर चलाया। हनूमान ने सोचा – 'राम का अवतार मर्यादा के स्थापन करने के लिये हुआ है। मैं ब्रह्म बाण का अपमान करता हूं तो मर्यादा भंग होती है' बाण के लगते ही वह पृथ्वी पर गिरे। मेघनाद ने उन्हें नाग फांस से बाँध लिया। जान बूझ कर बँध गए। लड़ने नहीं आए थे। सीता की सुध लेने आये थे। यह लड़ई इनकी लोला मात्र थी और इसमें इन्होंने अपने काम निकालने की युक्ति देखी।

बँधे बँधे गये। राक्षस सुखी हुये। भीड़ लग गई। कौतुक देखने के लिये नगर का नगर टूट पड़ा।

संसार विचित्र स्थान है। कोई नई बात होने दो, लाखों मनुष्य एकत्रित हो जाते हैं।

इनको फाँस में फाँसे हुये निश्चर रावण की सभा में लाये।

—०—

# सातवां समुल्लास

## हनूमान-रावण

सभा लगी हुई थी। सब मन्त्री, दीवान, सेनापति, कोषाध्यक्ष और राज कर्मचारी अपने अपने पद के अनुसार बैठे थे। सब चुप चाप ! सुई पृथ्वी पर गिरे और इसका शब्द सुनाई दे जाय, ऐसी दशा थी।

रावण का दरबार इन्द्र के दरबार से कम न रहा होगा। संसार भर में उसका नाम ही सुनकर सब अपने कानों पर हाथ धर लेते थे।

हनूमान अभय थे—'इनको देख कर रावण मुस्कराया। फिर अक्षयकुमार की मृत्यु का स्मरण हुआ, क्रोध आगया।

रावण बोला—'तू कौन है ?'

हनूमान—'बन्दर हूं।'

रावण—'मेरे बल और पराक्रम को नहीं जानता ?'

हनूमान—'बहुत अच्छी तरह जानता हूँ।'

रावण—'किस के बल से तू लंका आया और राज वाटिका को हानि पहुंचाई ?'

हनूमान--'मुझ में तुझ में और सब में उसी का बल है जो बल-पति कहलाता है। जिसकी आज्ञा से माया ब्रह्माण्ड को रचती है, जिसकी प्रेरणा से ब्रह्मा जगत को उत्पन्न करता, विष्णु पालता और शिव संघारता है। जो अखिल ब्रह्माण्ड में व्यापक है, जिसने शिव का धनुष तोड़ा और खरदूषण और त्रिशिरा को मृत्यु के घाट लगाया, मैं ने उसी का बल लेकर लँका में प्रवेश किया। यह तेरा बल नहीं है, उसी का बल है जिसके प्रताप से तूने चराचर जगत को जीतकर वशीभूत कर रक्खा है।'

रावण चुप रहा।

हनूमान फिर बोले—'और मैं तो पहिले ही से तेरे बल और पराक्रम से सचेत हूँ। तू ने सहस्त्रबाहु और बाली के साथ युद्ध किया था। उसका यश और उसकी कीर्ति सारे संसार में फैली हुई है।'

रावण ने पते पते की बातें सुन कर हनूमान को हंसी में उड़ाना चाहा। प्रसग को पलट दिया। 'तू ने मेरी वाटिका को क्यों उजाड़ा ? उसने तुझ को क्या हानि पहुंचाई थी ?'

हनूमान—"मैं भूका था, भूक लग आई थी। फल तोड़ा खाया, कुछ मेरे पेट में गये, कुछ पृथ्वी पर गिरे। डालियों पर चारों ओर हाथ पड़े वह बोझिल होकर गिर पड़े। और यों मैं बन्दर हूं तोड़ फोड़ करना मेरा स्वभाव है। तेरे मालियों ने मुझे मारा। मैं ने भी उनको मार दिया। इस संसार में कौन ऐसा है जो सुरक्षा नहीं करता। यह सब प्राणियों का गुण है। इस पर तेरे पुत्र ने मुझे बांध लिया और यहाँ सभा में घसीट लाया।'

रावण—"तू बंध गया, बंधुआ हो गया।'

हनूमान—"मुझे ऐसे बंधने बंधाने की लाज नहीं। अपने स्वामी के कार्य्य की निमित्त सेवक क्या नहीं करता ! मैं यहां काम करने आया। बंध गया, तो बंध गया। इस से क्या हुआ ! मैं तुझे सिखाने पढ़ाने और उपदेश देने आया हूं जिसके भय से सारा संसार भयभीत रहता है उससे तुमने बैर ठान रक्खा है। यह अनुचित कर्म है। सीता जी को लौटा दे। राम की शरण में आजा। वह शरणगत की रक्षा करते हैं। शरण में आये हुये प्राणियों को दण्ड नहीं देते।'

रावण—'और भी कुछ कहना है कि बस।'

हनूमान—"जो कुछ मुझे कहना था कह चुका।'

हाथ वह अच्छे ! रहें जो पुन्य में और दान में।
मन वह अच्छी है जो हो हरि के भजन और ध्यान में॥
आंख वह अच्छी है जिसमें प्रेम की दृष्टि रहे।
मुंह वह अच्छा, सद वचन और मीठी बातें नित कहे॥
पांव वह अच्छे चलें जो पंथ के उपकार में।
कान वह अच्छे जो हरी के कीर्तन की धुनि सुनें॥
जो नहीं हिंसक वह धर्मात्मा का रूप है।
जो प्रजा पालक हो भला जगत में वह भूप है॥
राम वन में थे, हरी सीता को यह अनुचित किया।
कर्म यह दुष्कर्म अपयश इसको करके क्यों लिया॥
दूत हूँ मैं राम का तुमको जताने आया हूं।
धर्म का रस्ता है अच्छा यह बताने आया हूं॥
जानकी दे राम को भय कहीं चिन्ता नहीं।
चित है निरमल जिसका इसमें दुमति दुविधा नहीं॥
तुम ऋषि संतान विद्वान और कुलमान हो।
काम ऐसे करना जिसमें सद्गति कल्याण हो॥

रावण—"वाह वाह ! यह बन्दर क्या है ! यह बड़ा विवेकी और ज्ञानी ऋषि है। यह तो लंका में मेरा गुरू बनने आया है। दुष्ट ! राज सभा में आकर मुझे ऐसी बातें सुनाने का साहस कैसे हुआ ! निःसंदेह तुझे तेरी मृत्यु यहाँ ले आई है। क्या यहां कोई ऐसा निश्चर नहीं है जो इसी समय इसको मार कर खा जावे ! छोटा मुँह बड़ी बात !'

राक्षस उठे। तलवार और बरछा और फरसा उठाया। हनूमान बँधे और जकड़े हुये खड़े थे, मुस्कराते और हँसते रहे। अभय थे। मन में किसी प्रकार की शंका नहीं थी। सम्भव था कि राक्षस इन पर हाथ उठाते कि विभीषण रावण का छोटा

भाई उस समय सभा में आगया। हाथ और दृष्टि के संकेत से इन्हें इस दुष्कर्म से रोक लिया।

—०—

# आठवाँ समुल्लास

## हनूमान और लंकादहन

विभीषण ने आकर रावण को नमस्कार किया। आज्ञा लेकर अपनी जगह पर बैठा। रावण ने कहा—'यह बन्दर यहाँ आया है। कहता है मैं राम का दूत हूँ। इसने वाटिका को उजाड़ दिया और कई निशाचर इसके हाथ से मरे। तुम्हारा भतीजा अक्षयकुमार भी इसी के हाथ से मारा गया। मैं चाहता हूं इसे मृत्यु दंड दिया जायेगा। तुम क्या कहते हो?'

विभीषण ने उत्तर दिया —"जो आपने आज्ञा की है उसके विरुद्ध कोई क्या कह सकता है। हाँ' यह दूत है' दूत के रूप में आया है, दूत का मार डालना राजनीति के विपरीत है। आप इसे और दण्ड जो चाहें दें। नीति विरुद्ध काई काम न हो।'

रावण ने कहा—'बहुत अच्छी बात है। बन्दर को अंग भंग करके यहाँ से जाने दो।'

सभा में मंत्र देने वाले बहुत होते हैं। किसी ने कुछ कहा किसी ने कुछ कहा। एक निशाचर बोला—'इसकी पूंछ में आग लगा दो। पुंछ कटा होकर जाय।' मंत्र सब को भाया। उनकी पूछ में बहुत कपड़े लत्ते लपेटे गये और तेल से भिगो दिया गया। वे मुस्करा रहे थे और मन ही मन में कह रहे थे कि यह सरस्वती देवी की दया है जो इनके मन को प्रेरणा कर रही है।'

पूंछ को लम्बी चौड़ी बनाया गया उसे बांस की खमाचो से जोड़ जोड़ कर कई हाथ लम्बा किया गया और कपड़ों की मोटी तह जमा कर मन माना तेल दिया गया। इस कौतुक को देखने के लिये सारा नगर ठठ का ठठ उमड़ आया। सब हँसते मुस्कराते और खिल्ली उड़ाते थे।

जब यह सब हो चुका, पूंछ में आग लगादी गई और हनुमान को छोड़ दिया गया। आग बढ़ी। यह इड़े, ऊँचे ऊँचे मन्दिर और घरों पर चढ़ गये। सबको आग लगा दो। सबके सब जल उठे। उसी समय प्रचंड वायु बहने लगी। आग फैली और सारा नगर जलने लगा। यह इधर से उधर और उधर से इधर चक्कर लगाते हुये सारे घरों को जलाते फिरे। विभीषण ने इनको पहिले ही से रावण के हथियार घर, वायु घर, बिजली घर, भाप घर, बारूद घर गंधक घर आदि का पता दे रक्खा था। यह सब के सब लंका के रक्षा की सामिग्री थे। सबको आग लग गई। बारूद उड़ी, गोले फूटे, बिजली भड़की, पानी फैला, वायु चली। जितनो कला कौशल के कार्यालय थे जलने लगे। सब जगहों से तड़ाके और गर्ज के शब्द आने लगे और गूँजने लगे। नगर का नगर देखते देखते भस्मो भूत हो गया और जो लोग कौतुक देखने और खिल्ली उड़ने आये थे रोने पीटने सिर धुनने और पछताने लगे।

कोई कहता था यह बन्दर नहीं था, देवता था। लंका को जलाने आया था। कोई कहता था यह रावण के पास कर्म का फल है जो बन्दर के रूप में अब पकने और उसे दण्ड देने आया है। लोग कहने लगे कि जब से यह सीता लंका में आई है तब ही से लंका पर आपत्ति आने लगी है। रावण की बुद्धि भ्रष्ट हो गई। यह सीता गुप्त दूतिनी है। धीरे धीरे राक्षसी स्त्रियों से लंका का भेद लिया। बन्दर उससे अशोक वाटिका

में मिला और उसी स्थान से यह उत्पात आरम्भ हुआ। बन्दर भेदी हो गया।

लाखों मुंह लाखों बातें! यह कुशल था कि विभीषण का नाम किसी ने भी नहीं लिया था। उसका महल नगर से कुछ दूरी पर था। वह तो बच गया। हनूमान उस पर नहीं कूदे और सब नगर का नगर श्मशान भूमि बन गया।

रावण चकित! दीवान मन्त्री भौचक्के होगये कि यह क्या हो गया! हँसी हँसी में बन्दर ने यह क्या खेल कर दिया! अब कहाँ रहेंगे! सोने की लंका तो मिट्टी में मिल गई। अब फूंस के झोंपड़ों में रहना होगा!

नगर का नगर व्याकुल हो गया। संसार में नाना प्रकार की आपत्तियाँ आती हैं। पानी की बाढ़ गांव के गांव बहाले जाती है। रोग आता है। महामारी आती है। सैकड़ों मनुष्य उसकी भेंट हो जाते हैं लेकिन जब आग लगती है तो वह घास के एक तिनके को भी जलाये बिना नहीं छोड़ती।

निशाचरों ने भाग भाग कर अपनी जानें बचाई। बनिये, महाजन, सौदा बेचने वाले सब के घर दुकान जल गये। नगर में जो भगदड़ मची वह उजड़ गया। जिसकी जहां सींग समाई उसी ओर भाग चला। जंगलों में जब कभी आग लगती है तो यही दशा हो जाती है। सिंह, चीते, रीछ, भेड़िये, गीदड़, हिरन, पाढ़े, बारहसिंहे आदि भाग निकलते हैं।

हनूमान जब लंका को जला चुके, उछल कूद कर के समुद्र में जा गिरे। पूंछ की आग बुझ गई। अधजले कपड़े लत्तों को उधेड़ कर फेंक दिया और न्हा धोकर फिर अशोक वाटिका में आ रहे। सब अपने दुखों में दुखी हो रहे थे। किसी ने उन्हें नहीं देखा। न छेड़ छाड़ की।

—०—

# वनां समुल्लास

## हनूमान और चूणागणि

आग लगं, लंका जल गई, राक्षसियां सीता को छोड़कर अपने सम्बधितो के खोज में लगी। सीता सुन टुकी थी कि हनूमान ने लंका दहन कर दिया है। त्रिजटा के स्वप्न का एक अंग पूरा हुआ।

हनूमान सीमा के पास पहुँचे। वह अकेली बैठी हुछ थी। इन्होंने कहा—'राम ने मुझे अपनी मुद्रा दो थी जिससे तुमको मेरे रामदूत होने का विश्वास होगया। माई ! तू भी कोई ऐसा चन्हि दे, जिससे राम को पता लगे कि मैं लंका में आकर तुझ से मिल चुका हूं।'

स्त्री का हृदय बहुत कोमल होता है। सोता चित्त में तो सुखी हुई कि हनूमान लौटकर राम को साथ लायेंगे, लेकिन स्त्री थो आँखें डबडबा आई।

सीता बोली–'पुत्र ! तुम मिले, तुम्हें देखकर छाती ठंडी हुई। अब तुम भा जा रहे हो। जाओ, मेरी दशा और कथा राम को सुनाओ। तुम आप अपने कानों से सुन चुके हो कि एक महीना का जीवन मुझे दिया गया है। आप आगये तो मैं बच जाऊँगी, नहीं तो ये राक्षस मेरे लहू का प्यासा है। मुझे मार कर खा जायगा। राम से कहा—"तुम्हारो सीता के सिर पर दुख का पहाड़ आकर गिरा है वह उस से दबी पड़ी है।'

बिन गया राते झींकते, रात गई तड़फाय।
सुध नहीं ली तुमने मेरो, हिया जिय अकुलाय ॥१॥
जल बिन मछली क्यों जिये, जल जब गया सुखाय।
तड़फ तड़फ तड़पे सदा, कोई नहीं सहाय ॥ २ ॥

राम २ हा रमापति, कहाँ छिपे हो राम।
जब नहीं देखूं आँख से, क्यो पाऊँ विश्राम ॥३॥
नैन हमारे बावले, ढ़ूँढ़ें राम का रूप।
राम मिले संकट कटे सूझे अगम अनूप ॥ ४ ॥
जिभ्या में छाले पड़े, राम पुकार।
अँखियाँ दोऊ पथरा गई, पथ निहार निहार ॥ ५ ॥

लक्ष्मण से कहा—"पुत्र तुम्हारा कहना नहीं माना। स्त्री की आंख दूर दर्शक नहीं होती। मेरा अपराध क्षमा करें। मैंने अपनी करनी का फल पाया।'

"दानों भाइयों को मेरा नमस्कार ! जाओ और उन्हें जल्द अपने साथ लाओ, तब तो सीता का जीवन बचेगा, नहीं तो वह मरने पर उधार खाये बैठी है।'

राम तुम कहां हो, राम मिलो अब आय।
सीता तड़पी राम बिन, राम न हुये सहाय ॥
राम विना जीना नहीं, राम बिना नहीं सुख।
स्वर्ग नर्क तुल्य है, राम बिा है दुख ॥

इतना कह कर चुप हो रही। रोते रोते हिचकियां आने लगीं।

**हनूमान:—**

धीरज धरे तो पार ! नहीं तो डूबे भव जलधार।

सीता—"अच्छा जाते हो तो जाओ, आंधी के समान जाओ और बोंडर के समान जल्द आओ।'

हनूमान नोई चिन्ह (निशानी) प्रदान हो।

सीता—"हाँ में भूल गई। मेरा चित्त ठिकाने नहीं है। मुझे तन मन की भी सुध नहीं।'

सीमा ने चूड़मणि उतार कर दिया—'इसे ले जाओ। राम को विश्वास होगा कि तुम मेरे पास आये थे और यदि रास्ते में तुम मेरा समाचार लेना चाहो तो इसे देख लिया करो। यह मेरी अवस्था का वृतान्त तुमको भी दिखाता रहेगा।'

हृदय भीतर आरसी, मुँह देखा नहीं जाय।
दृष्टि रूप पर तब पड़े, दुचिता जाय नसाय॥

—०—

# दसवाँ समुल्लास

## चूणामणि

हनूमान ने सीता से चूणामणि लिया। यह क्या है? न कोई अधिकारी मिलता है न प्रश्न करता है। न कोई उत्तर दिया जाता है और साथ ही उत्तर दाता भी नहीं है। उत्तर प्रश्न से उत्पन्न होता है।

राम ने हनूमान को मुद्रा (मुद्रिक) दी थी। वह क्या थी? ज्योतिर्मुद्रा। सीता ने चूणामणि दिया, वह क्या था? चोटी का साधन। चूड़ा (चाटी-संस्कृत =उठाना) और मणि (रतन हीरा) चोटी का हीरा, शिखा साधन है, कपाल क्रिया है। मुद्राओं का साधन सूत्रों (इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना) नाड़ियों में किया जाता है। आज कल के नाम के हिन्दू शिखा सूत्र तक का भेद तो जानते नहीं, वह मुद्रा और चणामणि को क्या समझेंगे—

जब कोई जानने वाला ही नहीं तो यह रहस्य जनावें किसको और जाने कौन!

जब धन का गाहक मिले, तब धन लाख विकाय।
जब धन का गाहक नहीं, कौड़ी बदले जाय॥ १॥

हीरा परखे जौहरी, शब्द को परखे साध ।
जो कोई परखे साध को, ताका मता अगाध ॥ २ ॥
नाम रत्न धन मुक्त में, गाठ खुली मन माँहि ।
सेंत मेंत ही देत हों, गाहक कोई नांहि ॥ ३ ॥
गाहक नहीं तो किसे दूं, लेने वाला कौन ।
रामायण की कथा को' हो रहा कह के मौन ॥ ४ ॥
शब्द २ का भेद है, वाच लक्ष का ठौर ।
कंथता वक्ता बहुत हैं, मथ काढ़ें सौ और ॥ ५ ॥

सुन्दर काण्ड सुपँथ खँड है। पथ मे चले सो पंथाई ! हनूमान चले। मुद्रा से पंथ को आरम्भ किया और चूणामणि को प्राप्त किया। मुद्रा राम ने दिया और चूणामणि सीता ने दिया। पूरा पथ मिल गया और वह दिव्य दृष्टि वाले निरं अहंकारी देवता तो पहिले ही से थे अब जो कुछ कसर रह गई थी राम और सीता ने उ- पूरी करदी।

नोटः—यह रहस्य ग्रन्थ बद्ध या पुस्तक बद्ध नहीं है और न हो सकता है। जो अधिकारी हों किसो सच्चे संत से इसका भेद जानें।

—०—

# ग्यारहवाँ समुल्लास

## हनूमान विभीषण (फिर)

हनूमान सीता से मिलकर विभीषण के घर गये। मिलना आवश्यक था। न मिलते तो काम अधूरे का अधूरा रह गया होता।

अभी लंका जल रही थो। लोग भाग रहे थे। जान सबको प्यारी होती है। श्मशान भूमि में कोई औघड़, अवधूत या

अघोरी हो रहता होगा। यह उछले कूदे, कुमके, भांदे ! संसार को न बनाते देर न बिगड़ते ! क्या था क्या होगया। इन्द्रजाल की माया ! अभी है अभी नहीं है ! या तो वह सोने कीं सुहावनी बस्ती थी या अब जल कर राख हो रही थी !

दो दिन का व्यौहार में, दो दिन का व्यौहार।
दो दिन का अधिकार सब, है मिथ्या संसार॥

रास्ते में किसी से मुठभेड़ नहीं हुई, न किसी ने रोक टोक की। रोकता कौन ! इधर लंका जल रही थी, उधर उसके रक्षने वाले चिता की आग में जल रहे थे। इन पर किसी की दृष्टि तक न पड़ी।

विभीषण अभी दरबार से आया था। मिला। प्रणाम किया। आसन देकर बिठाया।

विभीषण ने कहा—'नगर तो भस्मी भूत हो गया।'

हनूमान—'यह तुम्हारा ही पुण्य प्रताप था। न तुम भेद देते न उसकी यह दशा होती।'

घर का भेदी लंका ढावे, सोने का घर धूरि मिलावे

सब कुछ जल गया, बिजली घर, वरुण पानी शाला, वायु-शाला, कला कौशल का स्थान ! बारूद जला, गोले जले, भाप जली, हथियार, तोप तलवार, शंघनी एक भी तो नहीं बचा। अब मेघनाद कहाँ से ब्रह्म धनुष और ब्रह्म सर लायेगा ! फिर दूसरी बार सामग्री बनाने और इकट्ठा करने में बहुत देर लगेगी। अब राम को जाकर मैं लाऊँगा और लंका सहज में पराजय होगी। तुमने मेरी बड़ी सहायता की।'

विभीषण—'मैं बड़ा दुखी हूँ।'

हनूमान—'नहीं राम मिले न जगत मिला,
न इधर का हुआ न उधर का हुआ।

नहीं भक्ति न मुक्ति न नाम लिया,
न इधर का हुआ न उधर का हुआ ॥'

हनूमान—'घबराये क्यों जाते हो ! सब कुछ मिलेगा। राम की भक्ति करो। राम ने पूरण ब्रह्म का अवतार धारण कर रखा है।'

विभीषण—'राम का दर्शन होता तब भी बात थी।'

हनूमान—'अभी समय नहीं आया। मिलोगे अवश्य मिलोगे। राम तो आप ही आप अब लंका में पधारेंगे।'

विभीषण—'मैं मन का चंचल हूं। भक्ति क्सा कर सकूंगा !'

हनूमान—'तुम चंचल नहीं हो अज्ञानी हो।'

विभीषण—'अज्ञानी ?'

हनूमान—'हां, अज्ञानी और इसी लिये राक्षस हो।'

विभीषण—'मैं तुम्हारी बातों को नहीं समझ पा रहा हूं।'

हनूमान—'इसी के समझाने के लिये तो इस समय मैं तुम्हारे पास आया हूँ। सुनो विभीषण ! इस मन की तीन वृतियाँ होती हैं। या यों समझो इसके तीन रूप होते हैं अज्ञानी, मूढ़ और चंचल।

अज्ञानी ऊँचा, चंचल बिचला और मूढ़ निचला होता है। राम बड़े दयालु कृपालु और करुणालु हैं। जो उनकी शरण में आते हैं सब को तार देते हैं और उनके चरण कमल की छांह में सद्गति, शान्ति और निरभ्रान्ति मिलती है। तुम अपने आपको तपा हुआ समझो। तुम्हारे तरने में कोई सन्देह नहीं है।'

विभीषण—'राक्षसी योनि बुरी है। राक्षसों का तरना कठिन है।'

## „मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचारपत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

| | | |
|---|---|---|
| १—प्रकाशन का स्थान | : | अलीगढ़ |
| २—प्रकाशन अवधि | : | मासिक |
| ३—मुद्रक का नाम | : | श्रीमती सुधा मीतल |
| क—राष्ट्रीयता | : | भारतीय |
| ख - पता | : | शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़। उत्तर प्रदेश |
| ४—प्रकाशक का नाम | : | श्रीमती सुधा मीतल |
| राष्ट्रीयता | : | भारतीय |
| पता | : | शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ |
| ५—सम्पादक का नाम | : | श्रीमत[illegible] मीतल |
| राष्ट्रीयता | | भारतीय |
| पता | : | शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ |
| ६—स्वत्वाधिकारी | : | श्रीमती सुधा मीतल |
| संरक्षक | : | परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज |

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है।

दिनांक १५ सित०, १९८५

सुधा मित्तल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

हमारे यहां

**महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज**

**कृत**

हिन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक, स्त्री उपयोगी, स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती' सिलसिले के उपन्यास तथा परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें मिलती हैं।

पूरा सूचीपत्र मंगायें।

डाक खर्च सब का अलग है पुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से भेजी जाती हैं।

मिलने का पता :—

**कार्यालय**

**मनुष्य बनो**

शिव भवन, लेखराजनगर,

अलीगढ़ (उ० प्र०)

ग्राहक सं०

श्री

अ० स० सम्पादक — महेशचन्द्र मीतल

सम्पादक

व्यवस्थापक व प्रकाशक --

श्रीमती सुधा मीतल

शिव भवन, लेखराज नगर

अलीगढ़।

Printed by S. Mittal Data Dayal Printers, Aligarh